शब्द–ब्रह्म
ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
17 मार्च 2014

बुन्देलखण्ड का लोकनृत्य 'राई'

अर्पणा बादल (शोधार्थी)
बरकतउल्ला विश्वविद्यालय,
भोपाल, मध्यप्रदेश, भारत

शोध संक्षेप

राई यह बुन्देलखण्ड का सर्वाधिक लोकप्रिय नृत्य है। 'राई' का अर्थ है छोटी सरसों का बीज कांसे की थाली में जैसे राई का दाना तेजी के साथ इधर उधर दौड़ लगाता है वैसे ही तेज गति से नाचती हुई नर्तकी एक सिरे से दूसरे सिरे पर पहुंचती है और लौटती है। राई नृत्य ग्राम नर्तकी द्वारा किया जाता है। छोटे जागीर दार, जमीनदार, नम्बरदार, आदि को राई (राय) कहते हैं, उनके मनोरंजन के लिये जो नृत्य हो वह राई कहा जाने लगा। प्रस्तुत शोध प्रत्र में बुंदेलखंड के इस लोकप्रिय नृत्य की जानकारी दी जा रही है।

प्रस्तावना

राई की यह व्याख्या भी सटीक लगती है क्योंकि बुन्देलखण्ड अनेक छोटे छोटे राज्यों, जागीरों, जमीदारियों आदि में बंटा हुआ था और उनके स्वामी ग्राम नर्तकी से ही अपना मन बहला सकते थे किसी अज्ञात नाम कवि ने कहा है:-

विकट कला करि बेड़नी, विकट दिखावत रूप।
नवत देह अतिनर्त में, देत मौज बहु भूप।।

अर्थात बेड़नी असाधारण कला का प्रदर्शन कर और असामान्य रूप को दिखाती है और नर्तन में अपनी देह की लोच से राजा को बहुत आनन्द देती है। बेड़नी ग्राम नर्तकी को कहते हैं। बेडिया जाति की स्त्रियां नाचने गाने का व्यवसाय पुराने जमान से ही करती आई है। यह उनकी वंश परम्परा होती है। इन नाचने गाने वालियों में कोई कोई बडी सिद्धि प्राप्त कर लेती हैं।

लोक कथा

तांत्रिक सिद्धि प्राप्त एक बेड़नी और नरवर राज्य के बारे में बुन्देलखण्ड में एक किंवदन्ती प्रचलित है। कहा जाता है कि नरवर के राजा के दरबार में एक बेड़नी ने अपनी कला का प्रदर्शन करते हुये कहा कि वह कच्चे सूत पर नाच सकती है। किले के पहाड के सामने के दूसरे पहाड़पर सूत बांध दिया जाये। वह उस सूत पर नाचती हुई किले के पहाड़ से दूसरे पहाड पर पंहुच जायेगी। लेकिन इस कला का प्रदर्शन करने के बाद वह आधा राज्य लेगी। राजा ने यह सोचकर उसकी शर्त मान ली कि सूत पर पांव धरते ही वह गिरकर मर जायेगी, किन्तु उसने अपनी तांत्रिक विद्या के बल से उस बेड़नी ने तलवार, छुरी, चाकू, दुधारे आदि जितने भी हथियार उसकी निगाह में आए उन सबकी धार बांध दी ताकि राजा सूत को न कटवा सके, उसके बाद उसने मंत्र पढ़ा और सूत पर पांव रखा और नाचती हुई आधा फासला तय कर गई राजा यह देख चिंतित हो गये। उन्होंने सूत कटवाने का प्रयास किया किन्तु कोई भी धारदार हथियार सूत को न काट सका। अन्त में एक रांपी से वह सूत कट गया और बेड़नी गिर

कर मर गयी। बेड़नी रांपी की धार नहीं बांध पाई थी क्योंकि रांपी उसे दिखी नहीं थी। जहाँ बेड़नी गिरी थी वहां एक चबूतरा बना दिया गया था जो आज भी स्थित है। तब से कोई बेड़नी नरवर गांव में नाच नहीं करती।

राई नृत्य का समय

राई' नृत्य फाल्गुन और चैत्र में होता है होली के अवसर पर 'राई' नृत्य के विशेष आयोजन होते हैं। रात के प्रारम्भ होते ही नाच शुरू हो जाता है जो पूरी रात चलता है। बेड़नी की कला प्रवीणता के साथ उसका दम-खम भी सराहनीय होता है।

राई एक श्रृंगार प्रधान नृत्य है। जिसमें, प्रेम, वियोग, मिलन, संकोच आदि भावनाओं के गीतों की पक्तियों को ऊँचे स्वर से गाती हुई बेड़नी नृत्य स्थल से एक सिरे से दूसरे सिरे तक इतनी तीव्र गति से नाचती जाती है कि उसके साथ के ढोलकिया को दौडना पड़ता है। 'राई' नृत्य में एक पंक्ति का गीत, जिसे कहीं ख्याल कहीं टोंके तो कहीं स्वांग भी कहते हैं, वह अभिव्यक्ति की दृष्टि से चमत्कारिक गीत है। क्योंकि एक ही पंक्ति में पूरी अभिव्यक्ति हो जाती है। उदाहरणार्थ:- 1"संगैई भओ तो व्याव, काय राजा बूढे हो गये।" 2 "कच्ची बेरी के बेर, पकनई न पाए कच्चे टोर लए" उपर्युक्त दोनों गीत अपने आप में सम्पूर्ण है। चूंकि ये नृत्य गीत हैं अतः एक पंक्ति गाकर उड़ा दी जाती है और उस पर बेड़नी घंटो नृत्य करती है। इन गीतों में अन्तरों की ठूँस-ठास उसके चमत्कारिक प्रभाव को नष्ट करती हैं।

इस नृत्य में मृदंग अथवा ढोलक कमर में बांध कर वादक स्वयं बेड़नी (नर्तकी) के साथ नाचता है। इसके अतिरिक्त नगड़िया, झांसे, झेला बजाते हैं। लोक गायक फागें गाते हैं। राई में गाई जाने वाली फागों में अनेक प्रकार हैं। यथा - छन्दयाऊ, चैकड़ियाऊ, खड़ी, डिड़खुरयाऊ, झूलाकी, सकियाऊ और ख्याल की फाग। राई नृत्य मशाल के प्रकाश में होता है और ऐसी रूढि बन गई है कि आज जहां बिजली उपलब्ध है वहां भी राई में मशाल प्रज्वलित होती है। वाद्यों में हारमोनियम, ढोलक, तबला, सारंगी, कीगड़ी, खंजड़ी, झांझ, मंजीरा, रमतूला आदि में से जो भी प्राप्त होते हैं। उन्हें संगत में लिया जाता है। ग्रामीण विदूषक भी राई में सम्मिलित होकर हल्का मनोरंजन प्रस्तुत करता है। किसी लोकगीत के आधार पर स्वांग भी राई को अंग बन जाता है। फड़बाजी के अवसर पर फाग गीतों के साथ साथ कभी कभी बेड़नी द्वारा नृत्य भी किया जाता है। 'ईसुरी' की फागों को लोकप्रिय बनाने में फाग गायक धीरेन्द्रपण्डा और 'रगंरेजन' नर्तकी का बड़ा सहयोग रहा है।1

सुघड़ देह यष्टि वाली नवयौवन जब बंडे घेर वाले लहंगा, छींटदार ओढ़नी और पूरी आस्तीन या आधी का सलूका पहिनकर पद संचालन करने के बाद फिरकनी सी नाचती है। तब लहंगा छाते की तरह तन जाता है। और इस भंगिमा को देखकर दर्शक सुध बुध खो देता है। इस श्रृगांर नृत्य में श्रृगांर चेष्टाएं भी हो जाया करती हैं, और जब बेड़नी ऊँचे स्वर से गाती है:- "घर में दो - दो नार, घर में दो - दो नार राजा बिडनियां पै रीझ गये।" तब बुन्देलखण्ड की संस्कृति का यह पहलू उजागर हो जाता है कि यहां सामंत वर्ग में बहु पत्नी प्रथा प्रचलित थी और नर्तकी को योग्य भी माना जाता था। बेड़नी एक पंक्ति को एक-एक घण्टे तक गाती है। राई में बहुधा एक पदीय गीत गाये जाते हैं। कभी-कभी पूरे गीत भी बेड़नी की वाणी में बिखरते हैं।

राई गीत तीन रूपों में प्रचलित हैं। पहला और सबसे पुराना रूप है एक पंक्ति का, जो टेक जैसा लगता है। यदि उसे सखयाऊ फाग की दुम या लटकनिया माना जाए, तो वह उतना पुराना नहीं ठहरता। वस्तुतः यह गीत अपनी रचना प्रक्रिया में एक पंक्ति का ही था और फसल कटकर आने के समय कृषकों के आनन्दोत्सव में गाया जाता था। इस दृष्टि से वह प्राचीनतम सिद्ध होता है। कुछ उदाहरण देखें:-

छिटकी चारउँ ओर, छिटकी चारउँ ओर, सूरज की बैन जुँदइया।

अंधयारी है रात, अंधियारी है रात, बिन्नू को बूँदा दमक रओ।

सपने में दिखाय, सपने में दिखाय,

पतरी कम बँूदावारी हो।

दूसरा रूप वह है जिसमें राई के साथ अन्तरे के रूप में दो या तीन दोहे जोडे गये हों। साखी की फाग या सखयाऊ फाग का रूप भी ऐसा ही होता है। अन्तर इतना है कि राई केन्द्रबिन्दु होती है और दोहा उसका अनुसरण करता है, जबकि सखयाऊ फाग में दोहा केन्द्र में होता है और उसकी दुम उसके पीछे चलती है। एक उदाहरण देखें –

बज रई आधी रात, बज रई आधी रात बैरिन मुरलिया जा सौत भाई।

बन से तू काटी गयी छेदी तोय लुहार।

हरे बाँस की बांसुरी, मनो निकरो नहू सार।।बैरिन।।

पोरे पोर सब तन कटे, हटे न औगुन तोर।

हरे बाँस की बाँसुरी, लै गई चित बटोरे।। बैरिन।।

तीसरे प्रकार की राई झूलना की राई है, जिसकी अर्द्धपंक्ति में पहली राई की अर्द्धपंक्ति होती है और दूसरी अर्द्धपंक्ति लम्बी होती है। लम्बी होने से उसकी लय झूलती लगती है। इसीलिए उसे झूला की राई कहते हैं। एक उदाहरण देखिए ऐसी जाँगाँ चलौ, ऐसी जाँगां चलो, गहरी नरइया, घने मऊआ, जमुनियाँ के छाँयरे।

झूलना की राई में थोडा सा परिवर्तन स्पष्ट है। जब यह राई गायी जाती है। तब नर्तकी नृत्य भी झूले की लय में करती है। कभी कभी राई की चार पंक्तियां जोडकर 'राई की फाग' बना ली जाती है, जो चौकड़िया फाग से अधिक मधुर और नृत्य के अधिक उपयुक्त होती है। एक उदाहरण प्रस्तुत है-

कैसो नोनो लगै, कैसो नोनो, लगै, जंगल में इतै उतै घूमबौ।

सेर चीता फिरैं, सेर चीता फिरैं, तिंदुअन को घातभरो हेर बौ।

रोझ साँझर की सान, रोझ साँझर की सान, झुंडन में फदर-फदर दोरबौ।

कऊँ भैंसा फिरें, कऊँ भैसा फिरें, सुँगरा को धुर्र-धुर्र घूरबौ।

सुगर मिरगन की चाल, सुगर मिरगन की चाल, मोरन को पंखा मरोबौ।।

एक एक पंक्ति में जैसे एक एक श्रृंगार काव्य समाया हुआ है। इसमें समाई हुई लाक्षणिकता किसी श्रेष्ठ काव्य से होड़ लेने का हौसला रखती है। राई में बेड़िनी की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। वह मुंह पर पारदर्शी घूघंट डाले रहती है, जिसमें वह लज्जाशील दिखती है, आँखों में काजल और मुंह में पान दबाये रहती है। बेडिनी की वेशभूष में निम्न चीजें महत्वपूर्ण होती हैं, जो उसके सौन्दर्य को प्रभावशील बनाती हैं। माथे पर बून्दा, सिर पर बेंदी बिन्दियाँ, शीर्षफूल, गले में तिदानों, कानों में कर्णफूल, नाक में फूली, हाथों में चूड़ियां, बगंरी, ककना, गजरा, कमर में चाँदी की करधनी

और पाँवों में घुंघरू और इसी के साथ अंगिया, चोली, ओढ़नी, पोलका चुन्नटदार घांघरा एवं चूड़ीदार पायजामा पहनती है। ये सारी चीजें वेशभूषा की आवश्यक समग्री होती हैं। राई में सौबत और बेड़िनी के बीच जबाव तलब भी होते हैं - पहले बेड़िनी अपना तर्क रखती हैं और फिर सौबत उसका जबाव देती है। इसकी शुरूआत इस तरह होती है –

नैना बन्द लागे कहयों हो चोली बन्द लागे कहयों हो।

बेड़िनी का तर्क पीपर को पत्ता डुलत नैंया इन यारों की यारी मिटत नैंया

नैना बन्द लागे सौबत पीपर की पत्ता डुलाय दे हों

इन यारों को यारी मिटाय देहों नैना बन्द लागे

इस तरह ख्याल और कहरवा के समन्वय के द्वारा अपनी पूरी तन्मयता के साथ रात भर चलती है। बुन्देलखण्ड में 'राई' के नृत्य का आयोजन शुभ माना जाता है कहा जाता है कि इससे देवता प्रसन्न होते हैं और अच्छी फसल देते हैं। तैयार फसल को कोई हानि न हो इसलिये देवता उसकी रक्षा करते हैं। बुन्देलखण्ड के अधिकांश क्षेत्र में राई लोकनृत्य के दौरान स्वांग भी गाया जाता है।

कछु नींद के नशा, कहु नशा रे यारी के।

दो के बीच में परे, कौन कौद ले लय करोटा

अर्जुन बैठ दुरयोधन बैठे, कौन के राखे मान

चूंकि राई नृत्य का आयोजन रात्रिभर होता है। अतः विराम के लिये नृत्य के बीच स्वांग नियोजना भी की जाती है। व्यग्यं स्वांग की एक बानगी:-

'मिट्टी को तेल हो रओ अतर कैसी फुईयाँ।' यहां पर यह ध्यान रखना आवश्यक है कि स्वांग में अपने समय सन्दर्भ की समस्यायें और जटिलताओं की तीखी प्रतिक्रिया भी शामिल रहती है। राई लोकनृत्य पहले सामन्तों, माँलगुजारों और रियासतों की शोभा ही बढ़ाता था लेकिन आज वर्तमान में ग्रामीण और नागर लोग भी इस नृत्य से अपना मनोरंजन करते हैं। राई मूलतः एक व्यावसायिक नृत्य है क्योंकि बेड़िनी की जीविका प्रायः इसी पर निर्भर होती है।

लोक नृत्य राई का मनोवैज्ञानिक अध्ययन

चूंकि बेड़नियां यथार्थ में देह व्यवसाय से जुड़ी हुई होती हैं और राई नृत्य उनकी आजीविका का साधन है अतः बहुत छोटी उम्र में ही वहां लड़कियों को इस पेशे में उतार दिया जाता है। उनके मन की भावनायें उमंग वहीं दबा दी जाती हैं यहां एक बेडिनी के मनोभाव इस भांति प्रगट होते हैं।

कच्ची बेरी के पेड़, कच्ची बेरी के पेड़ पकनई न पाए कच्चे टोर लये। उसकी कच्ची उम्र में ही उसे इस पेशे में आना पड़ा वह परिपक्व भी न हो पाई जब उसका खेलने कूदने का समय था तभी उसे इस काम हेतु दबाव डाला गया उक्त पंक्तियाँ उसकी मनोव्यथा को बताती हैं। ऐसे ही निम्न पंक्तियों में भी उसके मन की करूणा, वेदना है एकाकीपन झलक रहा है:-

जिन मारी गुलेल, जिन मारी गुलेल, आफत की मारी चिरैया।

फूले रइबों गुलाब, फूले रइबों गुलाब नईयाँ गरज भौंरा खों।

इन पंक्तियों में वह कहना चाहती है कि मुझे अपनी नजरों के तीर मत मारों वैसे ही वह आफत की मारी हुई है अपनी कैसे भी आजीविका चला रही है। नृत्य करते हुये स्वाभाविक है उसके मन की कोमल भावनाओं में उसके मन की उमंग

जाग जाती है। वहीं स्वयं को सचेत भी करती है। फिर वह कहती है तुम्हारें इस भरेपूरे यौवन का कोई मतलब नहीं है तुम इसी तरह से फूले रहो जो तुम्हारे ऊपर नजरों के तीर चला रहा है उसको तुम्हारी भावनाओं की कोई कद्र नहीं है। यहाँ श्रृंगार रस के साथ साथ करूण रस भी दिखाई देता है। यहाँ उसके मन के भाव उसके शब्दों में व्यक्त हो गये हैं। एक एक पंक्ति में श्रृगांर काव्य समाया हुआ होता है। वहीं श्रृंगार प्रधान गीतों के साथ बेड़नी के गाये जाने वाले कुछ गंभीर व आध्यात्मिक संकेतो वाले मार्मिक गीत भी होते हैं जैसे निम्न पंक्तियाँ।

पर नारी प्यारी लगे, सबै लगावत अंग
सबके पुरखा तर गये पर नारी के संग

उपर्युक्त पंक्तियों में वह कहना चाहती है कि वह नित्य नये नये पुरूषों के संपर्क में आती है और वह पुरूषों के मन को समझती है कि और कह उठती है कि हर पुरूष को पराई स्त्री अच्छी लगती है वो हर पराई स्त्री को अंग लगाना चाहता है और पुरूषों में भी यहीं प्रवृत्ति रही है। वहीं उक्त पंक्तियों का गहरा आध्यात्मिक संकेत भी देती हैं कि यहाँ पर नारी से तात्पर्य तुलसी और गंगा नदी से है और अन्तिम समय में भव सागर पार करने के लिये दोनों को साथ लेकर प्राण पखेरू उड़ते हैं। वह कुछ पंक्तियों में वह नृत्य के नशे में उन्मुक्त लोगें को संदेश देकर सचेत भी करती है। 1. भजलो सीताराम, भजलो, सीताराम तुलसी की माला लैलो हाथ में 2.ऐसी यारी बरै ऐसी यारी बरै ओढ़त की फरिया बिछा लई ऐसी दोस्ती को जला दो जिसमें अपने स्वयं की ही हम हानि करते हैं। इतना सारगर्भित गंभीर अर्थ को लिये ये पक्तियां राई नृत्य में गाई जाती हैं जहां श्रृगांर रस से भरी पंक्तियाँ लोगों का मनोरंजन करती हैं वहीं उक्त पंक्तियों के द्वारा उन्हें बीच बीच में सावधान भी किया जाता है। इसी प्रकार एक पंक्ति:-

घर में दो दो नार घर में दो दो नार राज बिड़निया पै रीझ गये। ये पक्तियां वहां की समाज व्यवस्था व पुरूषों की रसिकता का बोधकराती है उनके मन की भावनायें बडेनी कितनी आसानी से गाकर बता देती है कि घर में दो दो स्त्रियों के बावजूद भी जो राजा हैं वे बेड़निया पर रीझे हुये हैं। हमेशा पुरूषों को दूसरों की स्त्री ही अच्छी लगती है। इसी प्रकार कृष्ण की भक्ति के विविध विरहगीत राई गीतों में दिखलाई देते है।

'टेरैं घनश्याम बांसुरी में नाम लैं लैं टेरैं।
सोवत ती मैं रंग महल में मोहन मारी सेन।
लागी नींद उचट गई सजनी,
अब नै लगें दोई नैन जब जब बाजी
मोहन बंशी, बत बत भई बेचैन
अपनो दुख अब ए री सजनी, कासौ जाये कैन।
बांसुरी में नाम लै लै टेरैं।

इन पंक्तियों में बेड़नी कृष्ण से शिकायती लहजे में बोल रही है तुम्हारी बांसुरी मुझे नाम ले ले कर बुलाती है मैं अपने रंगमहल में सो रही थी मोहन तुमने मेरी नींद उचटा दी जब जब तुम्हारी बंशी बजती है। मुझे बैचेन कर देती हैं मैं अपना दुःख किससे कहुँ कृष्ण हैं कि मुझे परेशान करते हैं।

'चूल्हे में देही जराई, बैरन मतवारी मुरलिया
आधी रात मुरलिया वाजी
सुनके कूक उठी मैं भागी फिर नहीं परी हैं सुनाई
बैरन मतवारी मुरलिया। चूल्हे में

नर्तकी कहती है कि उस बैरी मुरलिया को जला दो वो मुझे आधी रात का जगाती है और मेरे

जाग जाने के बाद फिर वह नहीं सुनाई देती ऐसी बैरन मतवारी मुरलिया को चुल्हे में जला दो। इसी प्रकार निम्न पंक्तियाँ सांसारिक विरह को बताती हैं:-

'भुनसरिया है रात कुत्ता ले गव घंघरिया' इस पंक्ति में यौवना अपने पति की इतनी आतुरता से प्रतीक्षा कर रही है कि उस प्रेम दिवानी का लहंगा (घघंरिया) कुत्ता ले गया होश ही नहीं आया। राई में श्रृगांर कूट कूट कर भरा रहता है। राई की प्रधान विशेषता है उसकी रसवत्ता। गीत के बहुत संक्षिप्त आकार में भाव का एक टुकड़ा ऐसा असर करता है जैसा दाल में नमक। राई की एक पंक्ति में समाया भाव इतनी तीव्रता से फैलता है कि सुई लगते ही श्रोता की नस नस में फैल गया। कुछ पंक्तियों में सहज वक्रता होती है और कुछ में अन्य चमत्कार, जो अन्दर तक गुदगदा देते हैं। उदाहरण के लिए एक गीत है 'छटकी चारउँ ओर, सूरज की बैन जुँदइया'' और उसमें नायिका का संकेत चाँदनी रात से है कहती है चाँदनी चारों तरफ प्रकाश फैलाती हुई सूरज की बहन हो रही है अर्थात सूरज दिन में रहता हे। तो मिलन नहीं हो पाता और अब चाँदनी सूरज की बहन हो रही है, तो रात को भी मिलना सम्भव नहीं है।

एक समय था जब अंग्रेजी हुकूमत के समय गोरे अपनी शान भूलकर दूरिस्ट कार्यकाल का बोझिल समय राई गीत सुनकर एवं बेड़नियों के श्रंृगार रसपूर्ण नृत्य देखकर व्यतीत कर देते थे। यद्यपि सभ्यता का लिबास पहनने के कारण उच्च आफीसर वर्ग के हिन्दुस्तानी 'राई' या 'स्वांग' का तिरस्कार करते हैं, तथापि ग्रामीण क्षेत्रों या जंगलों में ये उच्च वर्ग राई नृत्य गीतों में आज भी झूमते हुए देखे जाते हैं। निम्न वर्ग तो खैर खुल्लम खुल्ला देखता व सुनता है, मध्यम वर्ग भी इनमें रूचि लेता है।

संदर्भ

1.छत्तीसगढ़ी एवं बुन्देली लोक गीतों का तुलनात्मक अध्ययन डॉ.दुर्गा पाठक, संस्करण 1994 पृष्ठ संख्या 407, 408, 410

2.ईसुरी 2/84 - 85, स कान्तिकुमार जैन, आलेख बुन्देलखण्ड के लोकनृत्य, श्याम मनोहर मिश्रा पृष्ठ संख्या 22-23

3.शोध ग्रन्थ महाराजा छत्रसाल की साहित्य साधना डॉ.सुधीर तिवारी, बरकतउल्ला वि. वि. भोपाल

4.ईसुरी एक / 83 - 84 संपादक कान्ति कुमार जैन डॉ. हरिसिंह गौर वि. वि. आलेख लोकनृत्य राई, मनोहर देवलिया पृष्ठ संख्या 25

5.बुन्देली लोक साहित्य परम्परा और इतिहास प्रो. नर्मदा प्रसाद गुप्त, म. प्र. आदिवासी लोक कला परिषद भोपाल, पृष्ठ संख्या 94, 95

6.चौमासा अंक 36 नवम्बर 14 फरवरी 95, आलेख बुन्देली लोक रागिनी, सैर फाग और ख्याल, लेखक डॉ.. राधावल्लभ शर्मा पृष्ठ संख्या 54 -55